त्रिष्पृशा महाद्वादशी

श्रीलगुरुदेव

श्रीश्रीगुरु- गौरांगौ जयतः

प्रथमतः एकादशी और उसके दूसरे पूरे दिन द्वादशी एवं रात्रि के अन्त में त्रयोदशी अर्थात् एह्यस्पर्श होने से वह 'त्रिष्पृशा' नाम से अभिहित होती है। हरि की विशेष प्रिय यह महापुण्य - विस्तारिणी तिथि को यत्नपूर्वक उपवास करना चाहिए । त्रिष्पृशा द्वादशी प्राप्त होने पर भी उसके पिछले दिन एकादशी को उपवासी रहने से उस पापाग्नि में समस्त कल्याण संपूर्ण रूप से दग्ध

हो जाते हैं। इस व्रत का पारण त्रयोदशी को करना होता है।

पद्मपुराण में श्रीसनत्कुमार - वेदव्यास संवाद में इस व्रत का माहात्म्य विस्तृत रूप से वर्णित हुआ है। श्रीसनत्कुमार ने कहा, - सर्वपापहारी और महापातकनाशिनी त्रिष्पृशा नामक यह महाव्रत, कामी व्यक्तियों के लिए कामफलप्रद और निष्कामियों के लिए मोक्ष प्रदानकारी है । हे महामुने! देवदेव श्रीहरि ने मोक्ष प्रदान के लिए ही तिथिवरा त्रिष्पृशादेवी का उद्भव किया है। यह व्रत अनुष्ठित न होने से समस्त वेद निखिल पुराण, कोटि कोटि तीर्थ,

असंख्य व्रत और निखिल देवताओं की पूजा करने पर भी कोई फल प्राप्त नहीं होता।

प्राचीनकाल में चक्रधर श्रीहरि ने क्षीरसमुद्र में शंकर, ब्रह्मा और मेरे निकट समुपस्थित अन्यान्य शरणागत व्यक्तियों से इस त्रिष्पृशा व्रत के विषय में कहा था। जो विषयासक्त रहकर भी इस पवित्र व्रतानुष्ठान में नियुक्त होते हैं, श्रीहरि उन सबको मोक्ष प्रदान करते हैं। हे मुनिवर ! कार्तिक के शुक्ल पक्ष में सोमवार बुधवार संयुक्ता त्रिष्पृशा होने पर वह कोटि पातक विनाशिनी होती है। महेश्वर, भृगुवाक्य से,

त्रिष्पृशा के दिन उपवास कर हत्याजनित पाप से मुक्त हुए थे एवं उसके फल से उनके हाथ से ब्रह्मकपाल भूपतित हुआ था।

हे विप्रवर! वाराणसी में और प्रयाग में मृत्यु होने के बाद एवं गोमती में स्नान करने से मुक्ति होती है - इसमें सन्देह नहीं है । किन्तु त्रिष्पृशा के दिन उपवास करने से गृह में रहकर भी मुक्ति प्राप्त होती है। एक बार श्रीजाहवी (गंगा) ने भगवान श्रीमाधव से रोते हुए अपना अभियोग निवेदन किया था, - 'हे ऋषिकेश ! ' कलियुग में मनुष्य ब्रह्मवधादि जनित पापों में और कलि कलुष में लिप्त

होकर मेरे जल में अवगाहन (स्नान) करेगा। इस प्रकार उनके शतशत पापों से मेरी देह कलुषित होकर दग्ध होगी। इसका उपाय क्या है? उसके उत्तर में श्रीमाधव ने कहा, 'हे गंगे! शतकोटि तीर्थ से भी जो श्रेष्ठ, कोटि यज्ञ से भी जो प्रशस्त और सांख्ययोग से भी जिसका प्राधान्य है, तुम उस त्रिष्पृशाव्रत का अनुष्ठान करो। दशमी, एकादशी और द्वादशी के योग से ज़ो त्रिष्पृशा है, उसको आसुरिक कहकर जानना। यह त्रिष्पृशा असुर और राक्षसों की परमायुवर्द्धिनी और बलवृद्धिकारी है, अतएव वह सब प्रकार से परित्यज्य है। गंगादेवी तदनुसार त्रिष्पृशाव्रत

पालन कर कलिकलुष से मुक्त हुई थीं।

हे मुने! सांख्यशास्त्र की सहायता से काम भोगरत विषयानुरागी या निवृत्तविषयी इन सबके लिए सचमुच मुक्ति दुर्लभ है। इसलिए इस मोक्षदायिनी त्रिष्पृशा का अनुष्ठान करो।

श्रीलगुरुदेव